

सम्राट्-संन्यासि-सम्भवम्

अथवा



सम्पूर्णात्मव्यथाकथा



वसन्ततिलका–शतम्

अन्यजन्मेषु यः सम्राट् संन्यासीवाद्य गेहगः।
तत्कृतात्मकथाकाव्यं सम्राट्–संन्यासि–सम्भवम्।।
सम्पूर्णदत्तमिश्रस्य सम्राट्–संन्यासि–सम्भवम्।
अस्ति मेऽस्यापरं नाम सम्पूर्णात्मव्यथाकथा।।



इमामात्मकथां मे ये मन्यन्ते दम्भ–लम्भिताम्।
मन्यन्तां ते तथा तेन मम कुत्रापि का क्षतिः?।।
सम्पूर्णार्णादिनीनाथा सम्पूर्णात्मपथप्रथा।
सम्पूर्णाह्लादिनीगाथा सम्पूर्णात्मव्यथाकथा।।

प्रणेता

कविपुण्डरीकः

सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

२००१

ह्रीं



श्रीगणेशाम्बिकागुरूभ्यो नमः
श्रीकुलदेवताभ्यो नमः
उँ नमः शिवाय



धवलाचल–सुन्दर्यै कुलदेव्यै मयाऽर्प्यते।
सम्पूर्णदत्तमिश्रेण सम्पूर्णात्मव्यथाकथा।।

–कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

नाम --

पत्र व्यवहार संकेत --

श्री–सम्मान–विजृम्भणेन विदुषां सम्पादयन्तीं सुखं
संवित्सम्भववैभवेन भविनामुद्भावयन्तीं मुदम्।
काव्यानन्दममन्दमन्तरगतं सञ्चारयन्तीं जने
सम्पूर्णार्ण–कला–विलास–वरदां वाग्वादिनीं भावये।।

कविपुण्डरीकः

सम्पूर्ण दत्त मिश्रः



अथ
सम्राट्-संन्यासि-सम्भवम्
वा
सम्पूर्णात्मव्यथाकथा

प्रणेता –
कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

उल्लासश्रीभवनम्
गोपालगढ़, भरतपुर, राजस्थान
321 001
निवास– (05644) 27597,24595

प्रकाशकः –
कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्रः

प्रकाशनकाल
विक्रम–संवत् २०५८, मार्गशीर्ष सुदि पूर्णिमा रविवार
तीस दिसम्बर २००१ ई०

प्रथम संस्करण
मूल्य सौ रूपये

आत्मकथा का आग्रह

आज से इकतालीस वर्ष पहले राजाखेड़े के दस्युग्रस्त जंगल में मेरे साथ घूमते हुए स्वामी अमृतवाग्भवाचार्य ने मुझसे आत्मकथा लिखने का आग्रह जिन शब्दों में किया था उनको मैंने इस आत्मकथा के "आचार्योऽमृतवाग्भवः" नामक नवें आश्रव के छठे श्लोक में इस प्रकार व्यक्त कर दिया है–

"तेनाऽपरक्तमनसा बहुधाऽहमुक्तो
यन्नोम्भितं बत मया तु मदात्मवृत्तम्।
त्वज्जीवनं परमिदं घटनाविचित्रं
तस्मात्त्वयाऽद्भुतपथाऽऽत्मकथा प्रकाश्या।।"

अर्थ :- "स्वामी अमृतवाग्भवाचार्य ने बड़े वैराग्य भाव से मुझसे बहुत बार कहा था कि मैं तो अपनी आत्मकथा पूरी नहीं कर सका पर चूँकि तुम्हारा जीवन विचित्र घटनाओं से अद्भुतरूप से भरा पूरा चल रहा है इसलिये तुम अपनी आत्मकथा अवश्य प्रकाशित कर जाना।"

स्वामी अमृतवाग्भवाचार्य को शरीर छोड़े बीस वर्ष हो चुके हैं और मेरी यह संक्षिप्त आत्मकथा संस्कृत में प्रकाशित है। विस्तृत आत्मकथा हिन्दी में उपन्यास–शैली में सम्पूर्णाख्यान–चन्द्रिका नाम से लिखी जा रही है।

कविपुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्र

कम्प्यूटर वर्णविन्यासकारः–
श्री गणेश दत्त मिश्र
ग्रन्थकार का पौत्र

मुद्रक :
नेशनल प्रिंटिंग प्रेस
बड़ा बाजार, भरतपुर

कम्प्यूटर–कलाकारः
श्री त्रिपुरेश्वर प्रसाद मिश्र
ग्रन्थकार का पौत्र

THE
SAMRĀṬ-SANṆYĀSI-SAMBHAVAM
OR
SAMPŪRṆĀTMAVVYATHĀKATHĀ

The auther :-
Kavi-Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA
Ullāsaçrī-Bhavanam
Gopal Gadh, Bharatpur, Rajasthan
321001

The Publisher
Kavi- Puṇḍarîkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

Published on
Saṁvat 2058 Mārgaçīrṣa sudi pūrṇimā
Sunday
December 30, 2001.
First edition
Price Rs.100/-

The author :-
Kavi-Puṇḍarīkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

The book available at :-
Ullāsaçrī-Bhavanam
Gopal Gadh, Bharatpur, Rajasthan
321001

 Residence-(05644) 24595, 27597

The Publisher
Kavi- Puṇḍarîkaḥ
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA

अनुक्रमण-दर्शनी

THE TABLE OF CONTENTS

श्रीः

सङ्केत

"सम्राट्–संन्यासि–सम्भवम्" अथवा "सम्पूर्णात्मव्यथाकथा" नाम की मेरी आत्मकथा के चतुर्थ आश्रव में "गौरी" मेरी गाय का नाम है और "नन्दी" उसके बछड़े का। भरतपुर के विश्वप्रसिद्ध केवलादेव के घने में भी मैंने इनके स्वयं चराने का वर्णन किया है। धूप में, वर्षा में, जाड़ों में, वसन्त में अर्थात् प्रत्येक ऋतु में मैंने जंगल में घण्टों गाय चराकर देखा है। गाय चराना क्या होता है यह स्वयं चराकर ही जाना जा सकता है। भगवान् कृष्ण और भारत के ब्राह्मण सम्राट् शूद्रक विक्रमादित्य को स्वयं जंगल में गाय चराने का अनुभव था।

आत्मकथा के दूसरे आश्रव में "तिवारी" और "जोशी" नामों से क्रमशः राजस्थान लोक सेवा आयोग के प्रथम अध्यक्ष पण्डित देवीशङ्कर तिवारी और उनके बाद उसी आयोग के कार्यवाहक अध्यक्ष पण्डित लक्ष्मीलाल जोशी अभिप्रेत हैं। द्वितीय आश्रव में ही मैंने जिन चन्द्रशेखर का नाम लिखा है वे उस समय चन्द्रशेखर शास्त्री नाम से महाराज संस्कृत कालिज जयपुर के प्रिंसिपल थे और उसके बाद वे ही स्वामी निरञ्जनदेव तीर्थ नाम से पुरी के जगद्गुरू शङ्कराचार्य बने। एक दिन वे जयपुर के बाजार में मुझसे रिक्शे में बतराते चले गये थे। बातें जीवन–नीति–विषयक थीं। जिन विष्णुदत्त शर्मा से मैंने उग्रता दिखाई वे विष्णुदत्त शर्मा I A S सुखाडिया के विश्वासपात्र शिक्षा–सचिव थे। वे उदयपुर के दाधीच ब्राह्मण थे। तीसरे आश्रव में "बर्कतुल्ल" शब्द सुखाडिया के बाद मुख्यमन्त्री बने बरकतुल्ला खाँ के लिये है।आठवें आश्रव में शृङ्गेरीपीठ के जिन शङ्कराचार्य से मेरे साक्षात्कार का वर्णन है वे स्वामी अभिनवविद्यातीर्थ थे और वर्तमान शङ्कराचार्य स्वामी भारती तीर्थ भावि–शङ्कराचार्य के रूप में उस समय उनके साथ थे। उस समय उन्होंने मुझसे मेरी तान्त्रिक–साधना के विषय में भी पूछा था।

शेष सुखाडिया, राजबहादुर, वीपी सिंह(विश्वनाथ– प्रताप सिंह) और अटल विहारी वाजपेयी के वर्णन में तो मैंने ऐसी कोई अस्पष्टता छोड़ी ही नहीं है। नवें आश्रव में वर्णित स्वामी अमृतवाग्भवाचार्य से तो मैंने पैंतीस वर्ष में हजारों घण्टे प्रत्येक विषय पर बात की है। वे भी संस्कृत के कवि, ग्रन्थकार तथा श्रीविद्या (त्रिपुरसुन्दरी) के उपासक थे। मुझे "कविपुण्डरीकः" की द्व्यर्थक पदवी भी, मेरे पच्चीस वर्ष की वय में लिखे "ऋतूल्लासः" से प्रसन्न होकर, भरतपुर के पण्डितों और प्रतिष्ठित नागरिकों की, भरतपुर के कम्पनी बाग के "वन–विहार" में, सभा करके उन्होंने ही दी थी।

कविपुण्डरीकः

सम्पूर्ण दत्त मिश्र

श्रीः

ग्रन्थाधार-विचार

खड़ी बोली हिन्दी के दोहे।

भारत में जिसको रहे लोकतन्त्र उच्चार।
इस दुःशासन से भला, घोर नरक का द्वार।।१।।

शासक इसे सराहते, कुत्सित स्वार्थ निमित्त।
शासित–जन–कृत–प्रशंसा लोभाज्ञान–प्रवृत्त।।२।।

भारत का होता न जो दोषी आज समाज।
क्षण भर भी टिकता नहीं, ऐसा पापी राज।।३।।

चोर डाकुओं से बुरे भारत शासक आज।
आतङ्कद को कोसते हैं आतङ्कद–राज।।४।।

व्यर्थ मान मैंने लिखा नहीं भूमिका लेख।
लज्जा लज्जित हो रही दुःशासन–दल देख।।५।।

दण्ड–शक्ति का डर नहीं, ना मर्यादा–भान।
नेता आँख नटेरते, सुन निज दोष–बखान।।६।।

वोट किसी को दो नहीं, तजो खलों का साथ।
भजो भगवती भैरवी, भगवद्भैरवनाथ।।७।।

ब्रजभाषा का "मन-हरण" कवित्त :—

गाँधी के गपोड़न के गढ़त गढेलन में,
गुरून के गौरव की जाय परीं पाग रे।
ताके सत अहिंसा की, भरम.भरी भासा की
भूल भुलैयन ना जनम गमा, जाग रे।
भीड़न नै भड़काते भाँड़न नै हाँड़न दै,
ना दै काहू कूँ वोट, लंपट.खोट त्याग रे।
तंग भये गंगादास! अंग चहत चंगा तौ
लुंगा लोकतंत्र में लगाय बेग आग रे।।१।।

कवि-पुण्डरीकः
सम्पूर्ण दत्त मिश्र,

श्रीः

ग्रन्थकार-विचारणा

सत्पुंसां नाशनार्थं यतन-परमिदं शासनं भारतीयं
तेषामेवार्दनार्थं पुनरपि विहिताः संविधाने प्रबन्धाः।
तस्मात्सम्प्रार्थयेऽहं बटुक! पशुपते! पाप-पूजा-पराणां
दुःशासानां विरूद्धं कुरू कुरू सफलामुग्र-विद्रोहसृष्टिम्।।१।।

भारते भण्ड-राज्यं यल्लोकतन्त्रमुदीर्यते।
तस्माद्दुःशासनान्मन्येऽहं घोरं नरकं वरम्।।२।।

शासकास्तत्प्रशंसन्ति कुत्सितात्स्वार्थकारणात्।
श्लाघन्ते शासितास्तत्तु लोभाज्ञानभयान्विताः।।३।।

दोषपूर्णोऽभविष्यन्नो समाजो यदि भारते।
क्षणमप्यचलिष्यन्नो पापशासनमीदृशम्।।४।।

दुराचार-रतान्दृप्तान्वाचालान्दम्भ-लम्भितान्।
लज्जाऽपि लज्जिता दृष्ट्वा भारतस्याद्य शासकान्।।५।।

निर्दला वा दलान्तःस्था जनाः सर्वे गतत्रपाः।
भ्रमन्ते राज्य-लोभेन प्रतिस्पर्धा-परायणाः।।६।।

राज्याऽधिष्ठित-धूर्तानां धिगेतादृक्स्वतन्त्रताम्।
औद्धत्याऽपरपर्यायां सज्जनता-विनाशिनीम्।।७।।

दुःशासाञ्श्वान-सङ्काशान्वदामो यदि भारते।
तदस्ति परमा मित्र! मानहानिः शुनामपि।।८।।

श्वानास्तु स्वल्पसन्तुष्टाः स्वामिभक्ता भवन्ति वै।
मुखेन स्वामिनीमुक्त्वा जनतां हन्ति शासकाः।।९।।

लगुडैस्ताडिताः श्वानाः पलायन्ते सरोदनाः।
वाचापि ताडितो दोषी शासको दमनोद्यतः।।१०।।

मतदानं मा कुरू रे! धर्मात्मन्! कस्मैचनापि सखे।
सुजनमिषेण न जाने के वा भवितारो दुःखदायिनस्ते।।११।।
(चारूगीतिः)

यदि मतदानमृते ते पुनरपि दुःशासनं प्रवर्त्तेत।
सन्तोषस्ते भविता यत्त्वं नो पापराज्यसन्धाता।।१२।।
(गीतिः)

सन्मार्गेऽभिनिवेशो यदि नोऽभविष्यदन्तरे सुवृत्तानाम्।
प्रह्लादादिसुभक्ताः कथमात्मापत्तिपारमगमिष्यन् ?।।१३।।
(वल्लरी)

महिषासुरमर्दिन्यां महालक्ष्म्यां श्रयो न किम् ?।
प्रह्लादप्राणरक्षार्थं नरसिंहायितं यया!।।१४।।

सुराज्यं प्राप्तुकामोऽहं भारते भगवन्भव !।
कथं तद्भविता तत्र प्रमाणं तव वैभवम्।।१५।।

उर्दू शायरी में मेरे जज़्बात

अवामी शख़्सियत में ही अगर ख़ामी नहीं होती।
ज़ुलम करती हकूमत क्या हिमाकत से खड़ी होती ?।।१।।

हकूमत की हरामी हरकतों की हिमायत मत कर।
अवामी सल्तनत की हकीकत से ख़ल्क़ वाक़िफ़ है।।२।।

मुखालिफ बोलियों को गोलियों हनती हकूमत को।
न देंगी गालियाँ जो लालियाँ तो क्या दुआ देंगी ?।।३।।

वतन आबाद करने के, सभी को शाद करने के।
तुम्हारे कायदे वादे फ़क़त मंजर फ़रेबी के ।।४।।

जवाँ नापाक करने का नहीं है शौक शायर को।
गिला करते गलों से गालियाँ तो निकल जाती हैं।।५।।

चलो, इफ्तार दावत से मना लोगे मुसल्माँ को।
ख़ुदा के कहर से महफूज रहने को करोगे क्या ?।।६।।

छिपा के असलियत कोई सितम की इन्तिहा कर ले।
ख़ुदा की आँख में तस्वीर है सब के गुनाहों की।।७।।

मियाँ, बेकार है चालाकियों पर तुम्हारा तकिया।
हिरनंकशिपू व रावन से बड़ी ताकत नहीं हो तुम।।८।।

वतन में इन्तख़ाबी मलंगों की छुपी साजिश है।
उसी के तहत ये इक–दूसरे को सजा ना देते।।९।।

सभी गाली, गिला, शिकवे–शिकायत कैद कर दिल में।
चुनावी जोकरों के जनाजों को बना दो मुमकिन।।१०।।

किसी की इन्तख़ाबी मुहिम में शामिल कभी ना हो।
किसी को बोट देकर कुफ्र का तू इजाफा ना कर।।११।।

ख़ुदा के इशारों को इबादत से समझना सीखो।
इसी से नमाजी की मंजिलें आसान होती हैं।।१२।।

जहाँ में खौफ खाओ — बेगुनाहों की कराहों से।
चापलूसों की निगाहों से।
शराफत की गरम आहों से।
लिपटती गैर जोरू की गरम औं' नरम बाँहों से।।१३।।

ज़मीनी ताकतों से ही किले ना सर किये जाते।
जिगर में लाज़िमी ईमान की बुनियाद का जज़्बा।।१४।।

करो मुझ पर मुकदमा हकूमत की मानहानी का।
वकीलों की जगह मैं अदालत में ख़ुद खड़ा हूँगा।।१५।।

कहूँगा कोर्ट में–" ऐ जज, मुकदमा ही नहीं बनता।
न जिनका मान दुनिया में, बता हानी हुई कैसे ?।।१६।।

ख़ुदा की कसम खाकर जो हकूमत का हलफ़ लेते।
खुसूसी ख़िदमतों का रोज दम भर, रोज दम देते।।१७।।

वतन के उन वजीरों पर ख़यानत का मुकदमा कर।
उन्हें गद्दार साबित कर रहा, उनके कलम कर सर।।१८।।

मिली है नौकरी जिनसे उन्हें तू सजा क्या देगा ?
हमारी जंग का उनसे ज़रा तू भी तसब्बुर कर।।१९।।

सुनो, ऐ ज़ालिमों की हकूमत के अलमबरदारो!
सुनो, शैतानियत की सरहदों के सिपहसालारो!।।२०।।

अभी इस बिरहमन के पास बगला की इबादत है
जिसे ज़ालिम हकूमत हटाने की पड़ी आदत है।।२१।।

बिरहमन–ज़हन ईमाँ की शमा का सख़्त हामी है।
जलाता उसे ईमाँ की ज़हाँ में जहाँ ख़ामी है।।२२।।

The Author's Thought

Declaiming dogs the Indian demagogues,
I, downright, deem, dear friend! th'insult of dogs. 1.

Dogs do grow faithful, with a piece of bread
While demagogues turn traitors, overfed. 2.

Dogs, even vainly charged, give grievous groans.
Rogues, warrantedly charged, fire furious [phones / tones]. 3.

Dishonest people that elect these rogues
Deserve th'atrocities of demagogues. 4.

'Tis fun to see, with contradicting throats,
The secularists, courting Muslim votes. 5.

Friends! boycott votes, awaiting right revolts,
Destined to drive on devils dire assaults. 6.

Mind not what form of Goverment is made.
It matters most what sorts of acts pervade. 7.

Hate lit 'rate kites, the heinous hypocrites
That, flatt' ring politicians, capture heights. 8.

The Gandhian plan of plain constructive strife
Is born to blast the basic Hindu life. 9.

The Indian Statesmen, virtual terrorists
Do claim to be the greatest pacifists. 10.

Th'offended Piety tries to raise Her fist
The Indian State would term Her terrorist. 11.

Instead of fists, Friends! use your Mystic Mights
That surely bring the Public Bandits' Blights. 12.

Grieve not great hearts that have not heav'nly heights.
God saves good souls, removing wretched plights. 13.

Believe in God, give up all greed in life.
And boldly try to cherish, children, wife. 14.

Kavi-Puṇḍarīkah
SAMPŪRṆA DATTA MIÇRA



कवि की दौहित्री
कुमारी प्रवीणा पाराशर
M. A.(Final)



कवि की पौत्री
कुमारी बालेशी मञ्जुला मिश्रा
B. A. Part-1

इन दोनों ने ग्रन्थ का प्रूफ देखा।

सम्पूर्ण दत्त मिश्र



कवि का पौत्र
गणेश दत्त मिश्र



कवि का पौत्र
त्रिपुरेश्वर प्रसाद मिश्र

इन दोनों ने ग्रन्थ को कम्प्यूटर में भर कर मुद्रण–योग्य बनाया।

सम्पूर्ण दत्त मिश्र

शाम्भवी मुद्रा में

सुन्दरीस्पन्दनन्दनः, कविकुञ्जरः, कवीश्वरः, कविकोकिलः,
कविसह्ृदयशिखामणिः, कविकुलमणिः,
कविपुण्डरीकः
पण्डित श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र

Sampūrṇa Datta Miçra

in çāmbhavī Mudrā

(A special pose of Yoga for tantrikas)

मिति संवत् २०४१ वैशाख वदि अष्टमी सोमवार

April 23, 1984



आत्म–परिचयः

स्वर्गादेवाऽवतीर्णः पुनरपि धरणेः स्वेच्छया स्वर्हि गन्ता
यः सुन्दर्याः प्रसादादधिगत–कविता–कामिनी–प्रीतिमत्तः।
सोऽहं भोगाऽभिषिक्तो भरतपुर–गतः सप्त–पुत्रो गृहस्थो
देवर्षि–ब्रह्मविद्गो–चरण–शरणगो मिश्र–सम्पूर्णदत्तः।।१।।

–कविपुण्डरीकः

सुन्दरीस्पन्दनन्दनः, कविकुञ्जरः, कवीश्वरः, कविकोकिलः,
कविसहृदयशिखामणिः, कविकुलमणिः,
कविपुण्डरीकः

पण्डित श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र

Kavi-Puṇḍarīkaḥ

Sampūrṇa Datta Miçra

मिति संवत् २०१६ वैशाख अक्षय–तृतीया रविवार

May 10, 1959



आत्म–परिचयः

स्वर्गादेवाऽवतीर्णः पुनरपि धरणेः स्वेच्छया स्वर्हि गन्ता
यः सुन्दर्याः प्रसादादधिगत–कविता–कामिनी–प्रीतिमत्तः।
सोऽहं भोगाऽभिषिक्तो भरतपुर–गतः सप्त–पुत्रो गृहस्थो
देवर्षि–ब्रह्मविद्गो–चरण–शरणगो मिश्र–सम्पूर्णदत्तः।।१।

–कविपुण्डरीकः



श्रीः

सम्राट्-संन्यासि-सम्भवम्

अथवा

सम्पूर्णात्मव्यथाकथा

अथ

प्रथम आश्रवः

संवित्सम्पूर्णसङ्गमः

श्रीगणेशाम्बिकाशर्वान्गुरून्नत्वोच्यते मया।
सम्पूर्णदत्तमिश्रेण सम्पूर्णात्मव्यथाकथा।।१।।

सम्पूर्णदत्तमिश्रस्य सम्राट्-संन्यासि-सम्भवम्।
अस्ति मेऽस्यापरं नाम सम्पूर्णात्मव्यथाकथा।।२।।

अन्यजन्मेषु यः सम्राट् संन्यासीवाद्य गेहगः।
तत्कृतात्मकथाकाव्यं सम्राट्-संन्यासि-सम्भवम्।।३।।

लग्ने मीने गुरौ चन्द्रे गज-केसरि-योगिनः।
सम्पूर्णस्य शरत्पूर्णिमायां जन्माऽभवन्मम।।४।।

वाशिष्ठिकद्विजकुलाञ्चललब्धजन्मा
विद्यार्जने जनक-योजनया प्रवृत्तः।
प्रारब्ध-पोषित-पराक्रम-पालितोऽहं
वाग्वादिनीबलविभूषितवाग्बभूव।।५।।

हिन्द्याङ्गली-गणित-शिक्षण-सङ्गमेन
भूगोलबोधमलभे खलु सेतिहासम्।
काव्यादि-कोष-युत-पाणिनि-शास्त्र-चुम्बी
सङ्गीत-वैद्यक-विधिज्ञ-विदं विवेश।।६।।

श्रीसुन्दरी-प्रमुख-मन्त्र-जप-प्रभावा-
द्धिन्द्याङ्गलीसुरगिरादिककाव्यकर्त्रा।
मध्येसभं त्वमृतवाग्भवविप्रदत्ता
प्राप्ता मया सुपदवी 'कविपुण्डरीकः'।।७।।

प्रीत्या पठञ्चरकसुश्रुतवाग्भटादी-
नेवं गुरोर्नियमतो हि भिषग्बभूव।
प्राप्ता मया जयपुरादपि शास्त्रि-संज्ञा
सद्यस्तदा समुपजातविवाह आसम्।।८।।

ऐलोपथी-पथ-विवेशन-पात्रतार्थं
राजपूत-कालिजमहं विधिना प्रविष्टः।
तत्रैव भौतिक-रसायन-शास्त्र-सङ्गेऽ
हं प्राणि-शास्त्र-विषयाध्ययनं चकार।।९।।

जातोऽपि मैडिकल-कालिज-वेशनार्हो
नाऽहं प्रवेशसफलोऽभवमुत्सुकोऽपि।
श्रीसुन्दरीभगवतीकृपया निरूद्धः
प्रत्याजगाम निजगेहमिहाऽऽगरातः।।१०।।

हिन्द्याङ्गलीसुरगिरोर्दुकविं विधाय
श्रीसुन्दरी समभिनन्दति मामुरःस्था।
राज्यादहं समयतो विनिवृत्तसेवो
मायामयामपि सुमोहमयामुपासे।।११।।

सोऽहं त्रिसप्ततिसमा वयसः सुपूर्य
श्रीसुन्दरीसमुपदिष्टसमाधिमार्गः।
एकान्तसेवनपरः स्वगृहान्तरेऽपि
स्वात्मारतिः स्वकृतिसंस्मृतिरासलीनः।।१२।।

आमन्त्रणान्यपि च यानि समापतन्ति
संस्थाप्रचालनकलोदकचातकानाम्।
दृष्ट्वैव तान्यनुपयोगितया क्षिपेऽहं
संस्था हि सम्प्रति यतो बहुपापसंस्थाः।।१३।।

चक्षुः प्रसार्य नरलोकगतिं समीक्षे
सर्वार्थतामनुभवामि न कोऽपि मित्रम्।
साधारणव्यवहृतिव्यपदेशदृष्ट्या
सर्वेऽपि सर्वसुहृदो न हि तत्त्वतस्तु।।१४।।

यच्चापि मिश्रकुलकर्म कृतं मयाऽहो!
जन्मान्तरे कृतमिव प्रतिभाति मह्यम्।
यज्ज्यौतिषं गणितजातकशास्त्रमिश्रं
तच्चापि वीतजनुषः स्मृतिसन्निभं मे।।१५।।

इति
प्रथम आश्रवः
संवित्सम्पूर्णसङ्गमः



अथ

द्वितीय आश्रवः

शत्रुभूतः सुखाडिया

राज्येन राज्यपदसेवकसङ्ग्रहार्थं
संस्थापिता विधिविनिर्मितराज्यसंस्था।
अन्यायहीनचयनाय तु लोकसेवाऽऽ
योगोऽधिपो जयपुरे नियतस्तिवारी।।१।।

कालेज-शिक्षक-पदाय कृतं द्विवर्ष-
मावेदनं मम निरस्तमृते समीक्षाम्।
साक्षात्कृतिं तदनु तत्र ममार्थनार्थं
साक्षादहं द्विज-तिवारि-समक्षमेतः।।२।।

"त्वां चन्द्रशेखर-बुधो यदि संस्कृतज्ञं
सम्मन्यते युवकमीदृशमात्तविद्यम्।
साक्षात्कृतेरनुमतिं तदनु प्रदास्ये
त्वायोगसम्मुखमवेहि न तद्विनाहम्"।।३।।

श्रुत्वा तिवारि-वचनं वचनानुकर्त्ताऽ
हं चन्द्रशेखर-गृहं तरसा जगाम।
सोऽपि प्रलिख्य किमपि स्वकरेण पत्रं
मह्यं ददावहमदाञ्च तिवारि-हस्ते।।४।।

आसीदिदं वरमनावृतपत्रमेत-
न्मार्गे मया न पठितं लिखितं किमत्र।
पत्रं पठन्नपि परं चकितस्तिवारी
साक्षात्कृतेरनुमतिं प्रददौ हि मह्यम्।।५।।

साक्षात्कृतौ तु चयनाय तदा तिवारी
विज्ञैस्त्रिभिः परिवृतः स्वयमेव तस्थौ।
मह्यं प्रदाय न पदं हृदि शर्म लेभे
विच्चन्द्रशेखर उपस्थित एषु चासीत्।।६।।

प्रत्येकसंस्कृतपदात्परिवर्जितोऽहं
भाषाङ्गलीपदकृते स्वमतिं चकार।
तत्प्रापणेऽभवदरिर्मम तत्र जोशी
यो मे हि संस्कृतपदेष्वपि शत्रुरासीत्।।७।।

अन्यायमेवमवगम्य विवृद्धमन्यु-
र्जोशीमहाशयमहं हि तिरश्चकार।
प्रत्यक्षधर्षणविकर्षितमानसोऽसौ
जोशी ततोऽधिकतरं रिपुतां गतो मे।।८।।

भाषाङ्गलीबहुपदेषु यदा न लब्धाः
प्राध्यापका विधिविनिश्चितयोग्यताङ्काः।
तत्रेष्टकोटिरहितास्तु जना नियुक्ता
नाभीष्टकोटिसहितोऽपि नियोजितोऽहम्।।९।।

एषा दशा प्रचलिता बहुवर्षमेवं
मत्प्रार्थना बत सदैव तिरस्कृताऽभूत्।
रिक्तानि कालिजपदानि वरं बभूवुः
सेवाग्रहस्तु मम गुप्त-निषिद्ध आसीत्।।१०।।

अन्यायशासनविरूद्धविरोधपत्रै-
र्मच्छत्रुतामुपगतोऽथ सुखाडियाऽपि।
ईर्ष्यालवो मम विपन्नदशाप्रसन्नाः
क्रोधं हि तस्य मयि वर्धयितुं ~~प्रयेते~~।।११।।
प्रसक्ताः

शिक्षाविभागसचिवस्य पदे निषण्णः
शर्मेतिशब्दविदितो द्विज-विष्णुदत्तः।
युक्त्यानुकूलकृतितर्पितमुख्यमन्त्री
मां राज्बहादुरमुखाद्गृहमाजुहाव।।१२।।

तद्गेहगेन मयकोक्तमिदं तदग्रे
यद्याङ्गलीविषयरिक्तपदे नियुक्तिम्।
मे बाधते निभृतशत्रुसुखाडियाऽसौ
तं मुख्यमन्त्रिपदतो विनिपातयिष्ये।।१३।।

इति
द्वितीय आश्रवः
शत्रुभूतः सुखाडिया



अथ
तृतीय आश्रवः
मन्त्रयुद्धे सुखाडिया

टैलिग्रमेण तदनु प्रहितेन सद्यः
कालेजशिक्षकपदे सुनियोजितोऽहम्।
राज्याधिपं न पुनरप्यमिलं यतोऽद्धा
प्राप्तात्पदात्पिशुनकैर्विनिपातितोऽहम्।।१।।

अल्टीमटं प्रहितमाशु सुखाडियार्थं
जोशीसकाशमुदितञ्च मया तदन्तः-
"त्वन्मृत्युपूर्वमचिरेण सुखाडिया ते
राज्यात्पतिष्यति सुखान्मम मन्त्रशक्त्या"।।२।।

"यन्मे हृतं पदमतो हि पदं हरिष्ये
प्राणान्न तस्य करूणाभृतभूसुरोऽहम्।
साक्षी भविष्यति भवान्मम घोषणाया
आरम्भयन्तु मयका सह मन्त्रयुद्धम्"।।३।।

प्रत्युत्तरं प्रहितवान्स्वकरेण जोशी
सख्यं ध्वनन्स्वमिलनाय सुखाडियाग्रे।
प्रस्ताव एष सरूषा मयका निरस्तो
मन्त्राक्रमो मयि तदा त्वरितं प्रजातः।।४।।

क्रीतो धनैर्विकट-तान्त्रिक-विप्र-वृन्दो
नानाविधं मयि समाक्रमणे प्रसक्तः।
प्रागेव निश्चिततिथेर्मम मारणार्थं
कृत्यास्त्रकाणि रिपुणा मयि मोचितानि।।५।।

पुत्रीयुतप्रियतमान्वितसप्तपुत्राः
सद्योऽभिचारदलनाय मया नियुक्ताः।
साङ्गात्मरक्षणकृते सततं समर्था
मन्त्र-प्रयोग-कलनामहमप्यकार्षम्।।६।।

गूढक्रयो रहसि तान्त्रिकभिक्षुरेको
विश्वासघातनिरतो रिपुभिर्निदिष्टः।
सौहार्दमादरभरेण मया विधाय
मां प्रेतभूतभुवि मद्बलये निनाय।।७।।

स स्वेष्टदैवतनिदेशमवाप्तुकामो
मोघार्थ उद्धत इतस्तत उच्चचार।
कर्णे निधाय करमाश्रवणातुरोऽसौ
मन्मन्त्रधर्षितबलो मयका विमुक्तः।।८।।

याँस्तान्त्रिकान्धनपदैर्बहु मानयित्वा
मन्नाशनाय यतमानसुखाडियाऽऽसीत्।
तेषामनेकविध-तन्त्र-विदाऽतिघोरं
ब्रह्मास्त्रकैस्तदभिचारमहं जघान।।९।।

प्रस्ताव आगत इतश्च सुखाडियातो
मन्त्रैर्यदा मम स पार्श्वपराजयोऽभूत्-
"अन्विष्य साधु वरमात्मसुतोद्वहार्थ-
मादिश्यतां हि भवता द्रविणं यथेच्छम्"।।१०।।

"यो वा धनाधिपसुतः सुपदप्रतिष्ठो
न स्वीकरोति भवतः सुतया विवाहम्।
तेनैव चोद्वहमहं सुविधापयिष्ये
स्वीकारमत्र भवतोऽनुदिनं प्रतीक्षे"।।११।।

"अन्विष्य कञ्चन दरिद्रवरं स्वकन्यां
दास्यामि धर्मविधिना स्वक-साधनेन"।
एवं विनम्रवचसा तमु वाचयित्वा
प्रस्तावमाप्तमहमस्य तिरश्चकार।।१२।।

सद्यस्तदा निज-पराजय-भीत-चेताः
स्व-त्यागपत्रमचिरेण ददौ स्व-राज्यात्।
रूद्धो न तत्परिकरेण निवारितोऽपि
गूढं न कारणमवेदयदर्थितोऽपि।।१३।।

विज्ञापितोऽपि समये पिशुनावृतोऽसौ
राज्यं स्वकं विवशमाशु गतो विहातुम्।
पश्चात्त एव पिशुनाः परिचारकाश्च
द्राग'बर्कतुल्ल'-पदयोः पतिता विलज्जाः।।१४।।

इति
तृतीय आश्रवः
मन्त्रयुद्धे सुखाडिया



अथ
चतुर्थ आश्रवः
गौरी–नन्दि–निषेवणम्

राज्याधिपस्य तु निपातनपूर्वमेव
स्वेन स्वकेन विहितः स्व-सुता-विवाहः।
राज्यान्निपात्य तमहं प्रकृतिं प्रपन्नो
गोचारणाय विपिनेषु मनश्चकार।।१।।

संसार-देश-कृत-नामनि केवलाया
देवस्य सद्मनि 'धाना'ऽभिधया प्रसिद्धे।
नीता मया मम सिता सुरभिः सवत्सा
धीरं सुखं द्रुम-वितानमधश्चरन्ती।।२।।

'राणा प्रताप' इति नाम-नराधिपस्य
पुत्र्या तु हा! कवलिता क्षुधि 'घास-रोटी'।
गौरीव नामित-मुखोऽहममीष्ट-लीलो
भूम्याश्चचर्व जलदोदक-धौत-दूर्वाम्।।३।।

धेनुं विमुच्य चरणार्थमधस्तरूणां
स्थूलं लता-जनित-दोलकमाससाद।
यावद्रमे तमुपविश्य तदन्तराले
दोग्ध्री स्व-दोध-सहिता विपिने विलीना।।४।।

सन्त्यज्य दोलकमुदग्र-मनाः समन्ता-
त्तस्मिन्घनच्छद-वने वितते दधाव।
तस्या अदर्शनभुवोऽनतिदूरमेव
गौरी स्व-वत्स-सहिता मम गोचराऽभूत्।।५।।

चित्तं मुदा विकसितं मम तामुदीक्ष्य
नीत्वा गतस्तदनु नीपसमीपमेनाम्।
आरूह्य फुल्ल-दल-कम्र-कदम्ब-शाखां
गौर्या अलं दलदलं मुमुचेऽशनार्थम्।।६।।

त्यक्त्वाऽन्यदा सुघन-काननमेतदन्यं
वन्यं प्रदेशमुपगम्य मुमोच गौरीम्।
बब्बूल-पादप-तलाऽऽस्तृत-कण्टक-स्थः
सेहेऽहमीर्ण-पवमानमुदीर्ण-घर्मः।।७।।

गोपालनं नहि महानगरेषु शक्यं
लभ्या यतो न धरणी चरणाय गोभ्यः।
यावत्तृणानि तरवः कुशसम्पदा नो
तावत्कथं भवतु गोकुल-वर्धनाऽऽशा ?।।८।।

यावन्न सत्त्वमुदितं हृदि मानवानां
शौर्यं विवेकसहितं सह मन्त्र-शक्त्या।
यावन्न नाशमयते खल-लोक-तन्त्रं
तावद्गवामपि सतां क्व सुखोपलब्धिः ?।।९।।

गो-मांस-भक्षक-समर्थक-शासकाऽग्रे
गो-प्राण-रक्षण-विवक्षणमेव मौढ्यम्।
विध्वंसमावहति गोवध एव तेषां
कार्या सुकर्मनिरतैः समयप्रतीक्षा।।१०।।

कुर्वन्कथा अहमतीत्य दिनं सगोपः
स्कन्धे निधाय लगुडं प्रचचाल गेहम्।
दत्त्वा तृणानि सजलानि सनन्दि-गौर्य्यै
सुप्तः कुलेन सह साधु निशां निनाय।।११।।

इति
चतुर्थ आश्रवः
गौरी–नन्दि–निषेवणम्



अथ

पञ्चम आश्रवः

क्रोधो राजबहादुरे

श्रीभानुमद्भगवतामुदयाऽस्तकाले
व्यायाम-काम-नर-निर्मित-वाटिकायाम्।
नित्य-क्रिया-रूचिरहं नगरोपकण्ठे
बाल्ये प्रफुल्ल-मनसा विजहार नित्यम्।।१।।

सङ्गीत-विद्गुरूरपि व्रजति स्म सायं
शिष्यैर्मया च सह राजबहादुरेण।
यावद्वयं गुरू-निदिष्ट-दिशा क्रियास्था-
स्तावद्गुरूर्गुडगुडापयते स्म हुक्काम्।।२।।

शिष्याः समे समुपपन्न-शरीर-शौचा
विष्टा हि मल्लभुवि पाद-कर-श्रमान्ते।
(थे डण्ड-बैठक लगा घुसते अखाडे)
व्यायामतश्च विरताः प्रभुमन्दिरस्था
(व्यायाम पूर्ण कर मन्दिर में खडे हो)
भक्त्या जगुर्गुरूसमं हनुमत्प्रशस्तिम्।।३।।

स्वं स्वं गृहं प्रति गतेषु सहाऽऽगतेषु
सङ्गीतशिक्षणमभूद्गुरुमन्दिरे नौ।
हार्मोनियन्ध्वनक-राजबहादुरेण
मार्दङ्गिकेन गुरूणाऽहमगायि गीतम्।।४।।

काले समापतति राजबहादुरस्तु
काङ्ग्रेसगो नहरू-मन्त्रि-सभाऽङ्गभूतः।
कालेन चाहमपि तद्विपरीतवृत्ति-
र्भाग्यानुगो निज-कुटुम्ब-भृतौ निमग्नः।।५।।

दुर्वृत्त-शासन-समिद्ध-सुखाडियातः
क्षुब्धो हि हानिमनु हानिमहं प्रसेहे।
वार्त्तास्तु मद्दमनचक्रविकर्त्तनाय
जातास्तयोर्न मम लाभकरा अभूवन्।।६।।

"दुःशासनं शपसि हा! किमहं नु दुष्टः?"
पृष्टोऽहमेवमवदं तमु राजबहाद्रुम्–
"दुःशासने प्रहरणैर्निजसाहसानां
देहि प्रमाणमिह नो तु सहस्व निन्दाम्"।।७।।

श्लाघा-परोऽपि मम राजबहादुरस्तु
मद्योग्यतोचित-पदाप्तिरूचिं न चक्रे।
तत्साहचर्य-कुपितस्तु सुखाडिया हा!
मां तच्चुनाव-चरकाऽनुचरं हि मेने।।८।।

मन्मुख्य-मन्त्रि-मनु-युद्ध-समाप्ति-पूर्वं
नेपालतो मम गृहं मिलनाऽभिलाषी।
आगच्छति स्म खलु राजबहादुरोऽसौ
गेहे सताऽपि मयका मिलनं निषिद्धम्।।६।।

गेहाङ्गणस्थ-पितरं मम स प्रणम्य
ज्येष्ठात्मजाय पद-दान-कृत-प्रतिज्ञः।
मत्क्रोधमन्तरवगम्य गतो विषण्णो
मद्वारितो मम सुतोऽपि पदं न लेभे।।१०।।

अष्टादशाब्द-समयं त्वतिवाह्य भूयो
लब्ध्वा ममानुमतिमागतवान्स गेहम्।
संस्था-प्रधान-पद-दान-कृते कृतस्त-
त्प्रस्ताव आशु मयका सघृणं निरस्तः।।११।।

हा! किंविधा भगवति! त्वदुदग्र-दामा
कामाऽभिसार-सरणाऽऽभरणाऽस्ति माया ?
मज्जीवने तव कृपा यदि नाऽभविष्य–
त्तन्मां कथं सबहुमानमजीवयिष्यम् ?।।१२।।



अथ

षष्ठ आश्रवः

वी पी सिंह-निपातनम्

आसीज्जवाहर-चरः स जयप्रकाशो
गूढं ररक्ष कितवो नहरू-सुतां यः।
युक्त्या मुरार-मिलितश्चलितस्तथाऽसौ
येनेन्दिरा निजपदं पुनरप्यवाप।।१।।

निन्द्येन्दिरामनुगतेऽपि कुकाल-तल्पे
ये लेभिरे ललित-भारत-राज्यलक्ष्मीम्।
ते सर्व एव दुरिताचरणा हि सिद्धा
नाद्यावधि क्वचन चापि सुराज्यशोभा।।२।।

"विश्वप्रताप" इति नामक एकसिंहो
देशे समाज-समता-ममता-मिषेण।
आरक्षणे दलित-रक्षण-पक्षपाती
जात्युच्च-वर्ण-दमनोद्धत एव जातः।।३।।

आरक्षणाप्तसुविधाः प्रतिपक्षिणश्च
सम्पादिताः क्रुधि परस्परशत्रुभूताः।
सिंहस्तु शूद्र-दल-पक्ष-गतो जगर्ज
विप्रादि-वर्ण-विपरीत-विषं ववाम।।४।।

आन्दोलनाय विवशा वरवर्गिणस्ते
शास-प्रशासन-समक्षमपास्त-तर्काः।
छात्रास्तदा युवतयो युवकाश्च मूढाः
क्षुब्धा निराशमतयो ददहुः स्वदेहान्।।५।।

सा मूर्खता युव-गता यदमुत्र काऽपि
व्यक्तिर्व्यधान्ननु निरर्थकमात्म-हत्याम्।
सिंहस्य का क्षतिरजायत कर्मणेत्थं
सिंहः किमाहतजनैर्नहि दाहनीयः ?।।६।।

गान्धि-प्रचार-जनितो जन-बुद्धि-नाशो
नैष्फल्य-कारणमहो! युव-साहसानाम्।
प्राणार्पणं मनसि निश्चितमेव यैस्तैः
शत्रुर्निपत्य न हि किं प्रविदारणीयः ?।।७।।

छात्रार्त्तिपीडितमना अहमर्धरात्रे
मन्त्रप्रहारकरणे विधिना प्रवृत्तः।
सद्योऽष्टमेऽह्नि मनु-घातित-वाजपेयी
सिंहस्य सङ्गमजहात्तदनिच्छुकोऽपि।।८।।

शक्त्याः परीक्षण-दिनेऽहमुदग्रमन्त्रः
सम्मोहयन्सकल-लोकसभां प्रसह्य।
सिंहस्य सम्मिलित-नैक-दल-प्रसूतां
शक्तिं जहार विवशं प्रविधाय सिंहम्।।६।।

मन्मन्त्र-मारित-मना मृत-राजनीतिः
संत्यक्तवान्सदनमेव स वीपि-सिंहः।
पापौघ-पीडित-शरीर इतस्ततोऽसौ
सीदन्स्वकालमतिवाहयतेऽस्तकीर्त्तिः।।१०।।

ब्रह्मास्त्र-शक्तिरपराजित-वीर-भावा
लोके चकास्ति चिदचिन्त्य-गतिस्त्रिलोके।
मिथ्या वदन्ति वृषला विधि-बुद्धि-हीनाः
काली-कला कलियुगे न हि सिद्धिमेति।।११।

ये निन्दनीयकरणाः सुगुणैर्विहीना
व्रात्या स्वजातिपतिता अतिनिर्दयाश्च।
आश्रित्य ते दलित-मुस्लिम-जातिवर्गा-
न्भोगाय राज्यपदवीमधिकर्त्तुकामाः।।१२।।

इति
षष्ठ आश्रवः
वीपीसिंह–निपातनम्



अथ

सप्तम आश्रवः

वाजपेयि–नृशंसता

देशेऽधुना खलकमण्डलमण्डलार्त्ते
तुष्टीकृति-प्रकरणं किल मुस्लिमानाम्।
जातः प्रचण्डविषयः प्रतियोगितायाः
सर्वे दलास्तदभिसारपरा इवैव।।१।।

सर्वं विमुच्य कुरू मुस्लिम-लोक-पूजां
विद्योतते तदिति राजग-मूलमन्त्रः।
निर्लज्जता-कुटिलता-प्रतियोगितासु
धूर्ताधिपाञ्जयति पातकि-वाजपेयी।।२।।

यः कोऽपि वासमधिगच्छति हिन्द-देशे
हिन्दुं तमेव मनुते त्वित आडवाणी।
लोभात्मनां कलितया परिभाषयैवं
हिन्दुर्भवत्यहह! मुस्लिम-जातिकोऽपि।।३।।

हा! विश्वहिन्दुपरिषत्कुल-भाजपाग्र्यैः
सम्भूय नेतृभिरिदं कृतमस्ति पापम्।
विभ्रामण-प्रण-विभञ्जन-पण्डितानां
तेषां छलेन किल राज्यहृतिर्हि धर्मः।।४।।

ये साधवस्तदुपचार-विचार-चारा–
स्ते चापि वञ्चनपरा न हि साधवस्ते।
दुष्टाः स्व-धर्म-निरतानपि दूषयन्तो
धाष्टर्येन साधु-पदवीमपि धर्षयन्ते।।५।।

यो हिन्दुतां वदति जीवनमात्र-शैलीं
नो जाति-धर्म-समुदाय-विशेष-मूलाम्।
स भ्रामयन्भ्रमति निश्छल-हिन्दु-लोकं
षड्यन्त्रमेतदखिलं खलु भाजपायाः।।६।।

पादोदकं दलित-मुस्लिम-जातिकानां
नित्यं पिबन्ति निज-राज्य-कृते दलेशाः।
सर्वाऽधिकं पिबति तन्मधु वाजपेयी
कश्मीर-नीतिरपि चास्य परं प्रमाणम्।।७।।

मूढा वृथा विवश-शातित-सैनिकानां
शौर्यस्तुतिं विदधते करगिल्ल-युद्धे।
{वक्ष्याम्यहं तु तमु सैनिकमेव वीरं
मैं तो सुवीर उस सैनिक को कहूँगा}
{यो दुष्ट-नेतृ-दल-दण्डन-साहसी स्यात्।।
जो दुष्ट-नेतृ-दल-दण्डन-साहसी हो।।८।।}

हत्यां स्वकीय-खल-राज्य-सुरक्षणार्थं
ते कारयन्ति निज-नीति-वशाद्भटानाम्।
संवादयन्ति मुरजं निज-नीति-दासै-
र्वीरो न कोऽपि शठ-शासक-नाश-कर्त्ता।।९।।

भूः कम्पिता पतित-राज्य-समाज-पापै-
स्तत्रापि शोषण-मतिः करूणा-मिषेण।
स्वापव्ययात्स्वतरणाय करान्निधाय
नीचत्वमाचरति वाच्यपि वाजपेयी।।१०।।

चायाख्य-फाण्टग-दलान्यपि कारितानि
येनात्र हा! सुरभि-शोणित-भावितानि।
सोऽयं स्वभाव-पतिताधिप-वाजपेयी
घोरातिघोर-नरके पतितुं प्रयाति।।११।।

यत्पातकं न विहितं ब्रिटनैः प्रजासु
भिन्नैर्दलैर्विरल-मुस्लिम-शासकैर्वा।
तद्वाजपेयि-धृत-मन्त्रि-सभा विधत्ते
दुःशासनेन सुजनान् परिसादयन्ती।।१२।।

यद्रूपशासनमिह क्रियते तथा य–
त्सङ्कीर्त्यतेऽखिलदलैः शुचिलोकतन्त्रम्।
यद्येतदेव जनतन्त्रपरस्वरूपं
तल्लोकतन्त्रहननात्परमं न पुण्यम्।।१३।।

उद्दण्ड-चण्ड-खल-मण्डल-भण्ड-पाला–
ञ्चण्डी प्रचण्ड-फल-दण्ड-भुजो विधत्ते।
दृष्टं मया प्रपठितञ्च पुराण-शास्त्रे
जीवामि तत्सुखद-काल-कृत-प्रतीक्षः।।१४।।

इति
सप्तम आश्रवः
वाजपेयि-नृशंसता



अथ

अष्टम आश्रवः

शृङ्गे री–स्वामि–सत्कृतिः

स्वामी स शृङ्गगिरि-शाङ्करपीठ-संस्थः
सन्तोषिलाल-वणिजा विनयाऽऽनतेन।
सम्प्रार्थितः स्व-परिचारक-वृन्द-युक्तो
ग्रीष्मर्त्तु-तप्त-भरताख्यपुरं प्रविष्टः।।१।।

तत्सम्मुखं सदसि संस्कृत-भाषणार्थं
ज्ञात्वा त्वशक्तिमुदितां पुर-पण्डितानाम्।
श्रेष्ठी मया परिचितोऽपि परैरूदीर्णो
दूतेन मां विनय-भूषित आजुहाव।।२।।

स्वामी निशम्य कृत-संस्कृत-भाषणं मे
मां श्रोतृ-सम्मुखमुवाच सुविस्मितः सन्।
"शास्त्रिन्! कुतो हि भवताऽधिगताऽस्ति विद्या
किं तादृशाः सुगुरवो भवतः पुरेऽद्य ?"।।३।।

प्रश्नं तथाविधमवाप्य सभा-समक्षं
सङ्कोचतः क्षणमहं न किमप्युवाच।
मिथ्या-वचः-स्खलन-भीरूरवोचमेवं
स्वात्म-प्रशंसन-कलङ्क-विचार-मुक्तः।।४।।

"श्रीमन्नसौ मयि चकास्ति च यापि विद्या
सा सुन्दरी-वरद-मन्त्र-जप-प्रसूता।
जन्मान्तरादधिगताऽर्जित-मन्त्र-शक्त्या
मन्नाममात्र-गुरवस्तु तथापि पूज्याः"।।५।।

अन्येद्युरूद्भवदुदन्तद-पत्रिकासु
नामापि नाङ्कितमहो! मम तत्रगस्य।
तेन प्रमाणितमिदं यदहं सभायां
देहेन चापि समुपस्थित एव नाऽऽसम्।।६।।

तत्रेन्दिरा-प्रहित-शासन-पत्र-दिष्टा
आसन्कलक्टर-सुरक्षक-रक्षि-राजाः।
भूतं च भाषणमहो! निशि केवलं मे
नामापि मुद्रितमभूत्क्वचनापि मे नो।।७।।

तत्रैव मुद्रितमभून्ननु नाम तस्य
यस्तत्समाजसमुपेक्षित एव तस्थौ।
एवं मयाऽसकृदसूयक-दुर्जनानां
विद्वेष-मूलक-कुकर्म बहुत्र सोढम्।।८।।

स्वामी स्वक-प्रवचनाऽवसरे परेद्यु-
रन्विष्य मां समुपवेश्य पुरः समेषाम्।
प्रश्नोत्तराण्यपि ददौ समुपस्थितानां
मत्स्वागते समुदतिष्ठदुपेतवर्गः।।९।।

प्रस्थानकाल उदतिष्ठमहं पथान्तः
श्रेष्ठि-प्रशासक-विशिष्ट-जनात्पृथग्गः।
स्वामी ममान्तिकमुपेत्य चकार चर्चां
मन्मन्त्र-तन्त्र-समुपासन-साधनात्माम्।।१०।।

स्वामी स्वकीय-वर-मोटर-कारमन्तः
स्वं वेशयन्निदमवोचदुदीर्णवाचा।
"तस्माद्भवान्सपदि वक्ति विमुक्तभीति-
र्यच्चापि यत्र च यथा वचनेच्छुकोऽस्ति"।।११।।

इति
अष्टम आश्रवः
शृङ्गेरी-स्वामि-सत्कृतिः



अथ

नवम आश्रवः

आचार्योऽमृतवाग्भवः

आदौ तु राज-कुल-वास-गृहे पुरे मे
जातो मया परिचयोऽमृतवाग्भवस्य।
राजपूत-कालिज-वृताऽध्ययनो यदाऽहं
घर्माऽवकाश-समये निजगेहमेतः।।१।।

राज्ञः पितृव्य-भवने बहु-विप्र-मध्ये
सृष्टि-स्वरूप-विषयेऽमृतवाग्भवेन।
जातो ममोग्रतर-तर्क-वितर्क-रूपो
वादो विवाद उत तत्त्व-विदा-प्रयासः।।२।।

सर्वे द्विजास्तु तदधिष्ठित-पूज्य-भावा
मत्तीक्ष्ण-वाग्विचलिताश्चकिता बभूवुः।
केनाऽप्यनिर्वचन-भाव-विभूषितेन
तेनाऽहमात्मनि धृतोऽमृतवाग्भवेन।।३।।

त्रिंशत्समास्तदनु तेन ममाऽभिषङ्गः
प्रीत्याऽचलत्तदुपरामभवे निवृत्तः।
आवां वयोऽन्तर-भवद्व्यवहार-भेदं
विस्मृत्य विद्मिमयकावपि संविदाऽऽस्व।।४।।

गोविन्द-मिश्र-सदने सति नौ विमर्शे
संसार-शास्त्र-विषया बहवो बभूवुः।
स्वामी ममाऽपि गृहमेत्य कदाचनाऽसौ
साकं मया विपिन-चङ्क्रमणं चकार।।५।।

तेनाऽपरक्त-मनसा बहुधाऽहमुक्तो
यन्नोम्भितं बत मया तु मदात्म-वृत्तम्।
त्वज्जीवनं परमिदं घटना-विचित्रं
तस्मात्त्वयाऽद्भुतपथाऽऽत्मकथा प्रकाश्या।।६।।

किन्त्वेकदा तु सहसा गृहमागतोऽसौ
चिन्ता-विनोदन-परः सति मय्युदासे।
स्वल्पं विमृश्य विशदाऽन्तर-वित्त-वाचा
शान्तं शनैः समुदतिष्ठदुदात्तचेताः।।७।।

तस्मिन्समुच्चलति साकमकारि तेन
द्वारावधि प्रचलनं मयकाऽपि तूष्णीम्।
'चिन्तां न पालय' समीरितमेतमारा-
त्तस्यान्त्य-सान्त्वमधुनाऽपि न विस्मरामि।।८।।

दुःखं सुखं निज-कुकर्म-सुकर्म-जातं
दुःखेन चैव सुख-मूल्यमवैति लोकः।
एतद्द्वयोरनुभवेन सृतो विरागः
सद्यो विकासयति योगि-रसाऽनुभूतिम्।।९।।

विद्वत्सतामुरसि बोध-विराग-योगा-
त्सञ्जायते भुवि समेषु समानदृष्टिः।
साम्येक्षणं न कुरूते व्यवहार-साम्यं
नेता समेषु समताऽभिनयं विधत्ते।।१०।।

दुःखं सुखं सदसती कुजनाः सुवृत्ताः
सर्वाऽभिधानकमिदं गुण-दोष-सृष्टम्।
तेनैव सम्भवति तद्व्यवहार-भेदो
मिथ्या तु तद्विकृत-भारत-लोक-तन्त्रे।।११।।

इति
नवम आश्रवः
आचार्योऽमृतवाग्भवः



अथ

दशम आश्रवः

मोह–माया–मया–स्तवः

दुःखं सुखं विदित-भेद-दशं त्रिलोके
लोके सुखं मम समाहितमम्बिकायाम्।
तस्मात्कुटुम्बसहितोऽपि गृहस्थितोऽहं
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।१।।

गर्भाऽसुखानि मम विस्मृति-गर्भगानि
दुःखानि शैशव-गतान्यपि न स्मृतानि।
शिष्टायुषो विविध-दुःख-सुखेषु विष्टः
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।२।।

जाने स्फुटं पर-परिग्रह-भुक्ति-पापं
स्वापं स्वकं सुभग-भोगमपास्त-पापम्।
कालेषु कर्म-समता-क्षमताऽन्वितोऽहं
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।३।।

मुग्धं मनो यदि कदापि ममेन्द्रियाणां
निन्द्येषु कर्मषु निमज्जति दैवयोगात्।
तत्पाप-नाशन-तपश्चरण-प्रवृत्तः
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।४।।

यः पाप-पुण्य-पटली-चटुल-प्रवाहः
संसार-सागर इतः प्रसृतः प्रजानाम्।
तत्र स्व-मन्त्र-बल-पोत-गतोऽप्यभीतः
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।५।।

यद्यप्यपार-करूणा तरूणाऽरूणाऽङ्गी
लावण्य-लम्भित-कपोल-कलाऽऽश्रित-श्रीः।
सा सुन्दरी मदनुराग-जिता तथापि
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।६।।

दुर्वाससां भगवतां परशुप्रियाणां
मार्ग-प्रशस्त-करणी हृदि राजते मे।
लीलालसाक्षि-ललिताञ्चल-लालितोऽहं
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।७।।

प्राणेश्वरी-जप-सुसंस्कृत-सप्त-पुत्रा
मद्गेहिनी मदनुकूल-कृत-स्वभावा।
एतादृश-स्व-कुल-योग-वियोग-काले
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।८

जन्मान्तरेषु रूचिर-प्रकृति-प्रभाभी
रम्य-स्व-राजमहिषीभिरुपासितोऽहम्।
साम्राज्य-भोग-निरतो बहुवारमुर्व्यां
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।६।।

सन्तान-यान-धन-मान-वितान-भानै-
र्हर्षः पुरा मम यथा न तथाऽधुनाऽसौ।
प्राण-प्रयाण-समये सति सन्निकृष्टे
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।१०।।

निन्द्योद्भवो भवतु कोऽपि वरं धरण्यां
वन्द्योद्भवो नरवरो वरमस्तु कोऽपि।
वीत-प्रयोजन-जगज्जननान्त-काले
प्रीताऽम्बिका-वियुति-कल्पनयाऽपि कम्पे।।११।।

इति
दशम आश्रवः
मोह-माया-मया-स्तवः

काव्य-पुष्पिका

कृता वदि कुजे षष्ठ्यां छमानाराब्द.फाल्गुने।
सम्पूर्णदत्तमिश्रेण सम्पूर्णात्मव्यथाकथा।।१।।
सम्पूर्णदत्तमिश्रस्य सम्राट्–संन्यासि–सम्भवम्
अस्ति मेऽस्यापरं नाम सम्पूर्णात्मव्यथाकथा। ।।२।।
बहुजन्मसु यः सम्राट् संन्यासीवाद्य गेहगः।
तत्कृतात्मकथाकाव्यं सम्राट्.संन्यासि.सम्भवम्।।३।।
संक्षिप्तमात्मवृत्तं मे समाट्–संन्यासि–सम्भवम्।
विमर्शाय विदां तत्स्यात्स्वेच्छया वा यदृच्छया।।४।।

श्री श्री जगद्गुरू शङ्कराचार्य महासंस्थानम्, दक्षिणाम्नाय श्री शारदापीठम्, श्रृङ्गेरी

PRIVATE SECRETARY
To His Holiness
Sri Jagadguru Shankaracharya,
Dakshinamnaya
SRI SHARADA PEETHAM,
SRINGERI - 577139 (Karnatak)

Ref : D6-11074
Camp : श्रृंगगिरि:
Date : 12-4-1997

सम्पूर्णदत्तमिश्राख्य कविकुञ्जर ते नमः।
भावत्कं काव्ययुगलं रासनायकनायिकम्।।
आमूलाग्रमवैक्षन्त श्रीमद्देशिकपुङ्गवाः।
अमोदिषत चात्यर्थ प्रतिभामाकलय्य वः।
हिन्द्यामाङ्ग्ल्यां च वैदुष्यं श्लाघ्यं हि भवतामिह।
अस्तीति चानुवादोऽत्र स्फुटं वक्ति कवीश्वर।।
श्रीशारदा सर्वविद्याधीश्वरी खलु वर्तते।
भवत्सु सुप्रसन्नेति चाहुराचार्यपुङ्गवाः।।
आशास्यं किमिहास्त्यन्यत् सुन्दरीकरूणावताम्।
प्रसूतां काव्यपुष्पाणि भवतां कवितालता।।
इत्याशास्य गुरूत्तंसाः शारदापरमेश्वरीम्।
संप्रार्थ्यान्वग्रहीषुर्वो राङ्कवं सुमकोमलम्।।
अपि च श्रीचरणाः पुनरित्थमाशासते
समस्तलोकपालिनी प्रमत्तदैत्यघातिनी
स्वसेवकेष्टपूरणी हिरण्यगर्भकामिनी।
विधीन्द्रमुख्यसेविता स्थिरा च शृंगभूधरे
ददातु सर्वसम्पदं सदैव शारदा च वः।।

Enc.- (1) Shawl
(2) Prasadams
(3) MSS sent by you

इत्थं
एन् . एस् . दक्षिणामूर्तिः
(Dr. N.S. Dakshinamurthy)
शृंगगिरि जगद्गुरू शंकराचार्य श्रीश्री भारतीतीर्थ
श्रीचरणानामाज्ञावशंवदः

श्री श्री जगद्गुरू शङ्कराचार्य महासंस्थानम्, दक्षिणाम्नाय श्री शारदापीठम्, श्रृङ्गेरी

PRIVATE SECRETARY
To His Holiness
Sri Jagadguru Shankaracharya,
Dakshinamnaya
SRI SHARADA PEETHAM,
SRINGERI - 577139 (Karnatak)

Ref. DO1-180
Camp श्रृंगगिरि:
Date 17-8-1999

सुन्दरीकरूणापात्र त्रिभाषाकविताचण।
सम्पूर्णदत्तमिश्राख्यसुकवे ते नमोस्त्विदम्।।
सूक्तिपञ्चामृताभिख्यं काव्यं त्वद्रचितं कवे।
समार्पयाम सम्प्राप्य जगद्गुरूपदाब्जयोः।।
तदवेक्ष्य गुरूत्तंसाः करूणावरूणालयाः।
मोदमाविरकार्षुः स्वं शिवानुध्यानतत्पराः।।
बाला युवानः स्थविरा नार्यो नेतार आस्तिकाः।
सर्वेपि काव्यमेतद्धि दृष्ट्वा स्युः प्रीतमानसाः।।
आशास्य च भवच्छ्रेयः जगदाचार्यसत्तमाः।
शारदाकुंकुमं मन्त्राक्षतांश्च व्यतरन्मुदा।।

इत्थम्
Sd. /
(डॉ० एन्. एस्. दक्षिणामूर्तिः)

ऋतूल्लासः

स्वल्पाकारमपि प्रसाद–मधुरं काव्यं सुधा–वर्षणं
निर्मायैतदनाविलं खलु ऋतूल्लासाऽभिधानं कविः।
विश्वेषां कविताकृतां सुमनसां चेतांसि सम्प्रीणयन्
लब्ध्वाऽयं कविपुण्डरीक– पदवीं जीयात्सतां संसदि।।

–स्वामी अमृतवाग्भवाचार्यः

सूक्तिपञ्चामृतम्

श्री–सम्पूर्ण–विनिर्मितं सुमधुरं श्री–सूक्तिपञ्चामृतं
काव्यं नव्य–रसाऽनुकूल–रचनाऽलङ्कार–रीत्युज्ज्वलम्।
दृष्ट्वा कर्णपुटैर्निपीय च वयं मग्नाः प्रमोदार्णव
ईदृग्ग्रन्थ–ललाम–निर्मिति–कृते वर्धापनं ब्रूमहे।।

–स्वामी अमृतवाग्भवाचार्यः

रास–नायक–नायिकम्

कविश्रीपुण्डरीकस्य रचना वचनाभिगा।
समुल्लसित–सौरभ्या सभ्यानान्दयिष्यति।।

–प्रो0 बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते

श्री रेवेश्वर–रञ्जना

राजस्थाने भरतपुरि यः श्रील–सम्पूर्णदत्तो
मानोत्तुङ्गः कवि–कुल–मणिः पुण्डरीकोज्ज्वलश्रीः।
रेवानाथ–स्तुति–सुरभिते काव्य–बन्धो तदीये
वाचं प्रास्ताविक–पद–मयीं स्वैरमुन्मीलयामि।।

–राष्ट्रपति–सम्मानित महामहोपाध्याय
शास्त्रचूड़ामणि प्रो0 बटुकनाथ शास्त्री खिस्ते
अध्यक्ष : काशी पण्डितसभा, वाराणसी

श्री सम्पूर्ण दत्त मिश्र के ऋतूल्लास नामक संस्कृत काव्य पर कविभूषण– साहित्यमहोपाध्
याय–आशुकवि–वेदान्तभूषण–आगमरत्न–आम्नायधुरन्धर–महोपदेशक–कविकाव्यरत्नाकर–पण्डितप्रवर श्रीहरिशास्त्री दाधीच जयपुरस्थ द्वारा लिखित भूमिका का अंश :–

श्रीमान् महान् विद्वान् राजर्षि भर्तृहरि ने क्या ही सुन्दर कहा है –

"जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम्।।"

कवि का काव्य यशरूप अविनश्वर शरीर प्रकट करता है और वह काव्य ही जन्यजनक भाव से कवि का शरीर कहलाता है। इस शरीर में कभी जरा (बुढ़ापा) और मृत्यु का भय नहीं होता। ऐसे काव्य शरीर प्रादुर्भूत करने वाले कवि पूर्वजन्म के ऋषि होते है जैसा कि व्यास भगवान् की इस सूक्ति से सुस्पष्ट होता है –

"नानृषिः कुरुते काव्यम्"

जो पूर्वजन्म में ऋषि (ज्ञानी) होता है वह जन्मान्तर में विद्वान् होकर कवि होता है।

##

कवि की कृति में सहृदयता और अभिनवरोचकता भरी पड़ी है, समय–समय पर उपयुक्त होती जायेगी तो बडा लाभ होगा। प्रसाद गुण है और रचना सरस एवं सरल है। साथ–साथ हिन्दी अनुवाद भी कसौटी पर कसा हुआ सा प्रतीत हुआ है।
भाषा बहुत ही व्यावहारिक है, सबको ही पसन्द आवेगी।
कवि ने पद्यों का इंग्रेजी अनुवाद भी कर दिया है। इससे इंग्रेजी के विद्वानों को भी इस संस्कृत साहित्य के वर्णन के तरीकों का अनुभव होगा, वे भी इसे पढ़कर प्रसन्न होंगे।

च१०–६–५५ई०

श्रीहरि शास्त्री दाधीच
जयपुर।

On Pt. Sampurna Datta Mishra's powers of composing English verse :-

"Certainly the stanzas translated from your Sanskrit song, which you sent me, have a rhythm which is familiar to my ear. Your verses go very smoothly." **- Professor John Burrow, Department of English,The University, BRISTOL (U.K.)**

On Pt. Sampurna Datta Mishra's powers of creating Sanskrit,Hindi,Vraja Bhasha and English poetry :-

It is a matter of pride that he possesses equal command over Sanskrit, Hindi, Brij Bhasha and English enabling him to write poetry in all these four languages. **- Dr. Kala Nath Shastri**
Ex-Chairman, Rajasthan Sanskrit Academi, Ex-Director Bhasha-Vibhag,Ex-Director Saskrit Education,Govt. of Rajasthan

I hope you will have a successful career as a literary writer.
- Sir S. Radhakrishnan

I have been greatly impressed both by his command over the language and by his poetic gifts. **-Dr. Amar Nath Jha**

Misra's attempt is laudable and deserves apprectiation.
-Dr. P. K. Acharya, Mahamahopadhyaya

The Savant writer has a clear vision born of dispassionate outlook.
- A. Bhattacharaya, Frist Addl. Sessions Judge, Allahabad

When the verses were being recited to me, I was reminded of Kalidas' "Ritu Samhar". Pt. Mishra is giffted with genius and can compose with ease and fluency which are not easy to find.
- R.V. Kumbhare

I have read the Sanskrit verses with appreciation of its originality and style. **- Dr. C. D. Deshmukh**

I read it with interest and appreciation of your ability to write Sanskrit verse.
- Dr. C. D. Deshmukh
I.C.S (Retd.) Ex-Finance Minister Govt. of India, Ex-chairman University Grants Commission, New Dehli